कालिदास की काव्य शैली

भूमिका

कोई भी सर्जक या स्रष्टा सार्वकालिक औए सार्वभौमिक होता है। उसको देश और काल की परिधि में बाँधने का प्रयास उसका महान अपमान है। रचनाकार भी स्रष्टा ही होता है। उसकी कृतियाँ ही सृष्टि हैं। वह किसी भी भाषा का हो, इससे कोई लेना-देना नहीं होना चाहिए बल्कि उद्देश्य तो यह होना चाहिए कि उस रचनाकार ने कौन-सा और कैसा नवीन सृजन किया है और उस नव-सृजन का पूरे उत्साह से स्वागत होना चाहिए। इस प्रकार महाकवि कालिदास केवल संस्कृत साहित्य के ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व-साहित्य के साहित्यकार हैं और उनकी गणना शीर्षस्थों में होती रही है। उनकी दृष्टि इतनी सूक्ष्म है कि बाह्यसृष्टि और अन्तसृष्टि दोनों में ही निर्बाध प्रविष्ट होती है। उनकी कोमल और मनोरम पदावली पाठकों के अंतरतम का स्पर्श करती है। वाल्मीकि और व्यास दोनों का ही कालिदास की कृतियों में दर्शन प्राप्त होता है। उनकी रस, छन्द, अलंकार, भाषा, शैली, भावों की योजना अप्रतिम है उनका काव्य कौशल गगनचुंबी शिखर की भांति सुस्थापित होता है।

भाषा

कालिदास को भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त है। उनकी भाषा सरल, सरस, परिष्कृत, प्राञ्जल, मनोहारी और प्रसादगुण से युक्त है। उन्होंने कहीं भी पाण्डित्य प्रदर्शन की चेष्टा नहीं की है। शब्द और अर्थ में सामंजस्य का अनुपम उदाहरण अधोलोखित श्लोक में मिलता है-

द्वयं गतं सम्प्रति शोचनीयतां समागमप्रार्थनया पिनाकिनः। कला च सा कान्तिमती कलावतस्त्वमस्यलोकस्य च नेत्रकौमुदी।। (कुमारसंभव, पंचम सर्ग)

कालिदास की सरल शब्द-योजना निश्चय ही काव्य सौष्ठव को और अधिक बढ़ाती है। वे भावानुकूल भाषा के प्रयोग में सिद्धहस्त हैं और भाषा कि सरलता और गंभीरता दोनों का एकत्र दर्शन उनकी रचनाओं में प्राप्त होता है। गम्भीरा नदी में नायिका का आरोपण मनोहारी चित्र प्रस्तुत करता है-

तस्याः किंचित्करघृतमिव प्राप्तवानीरशाखं हृत्वा नीलं सलिलवसनं मुक्तरोधोनितम्बम्। प्रस्थानं ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः।। (पूर्वमेघ)

कालिदास शब्दों के अगाध भण्डार के स्वामी हैं जिससे भाषा में मनोरमता और सुन्दर प्रवाह स्वाभाविक रूप से दिखता है। संवाद सजीव, रोचक, आकर्षक, मधुर, सरल तथा सूक्ष्म है। छोटे-छोटे सरल वाक्यों के प्रयोग से गूढ़ व सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति उनकी कृतियों में परिलक्षित होती है।

पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग भी कालिदास के काव्य विशेषकर नाटकों को अलंकृत कर देता है। संस्कृत साहित्य की परंपरा के अनुसार ही कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तलम् व अन्य नाटकों में उच्च श्रेणी के पुरुष पात्रों से संस्कृत में और निम्न श्रेणी के पुरुष पात्र तथा सभी स्त्री पात्र से प्राकृत में संवाद करवाया है जो नाटक को अत्यंत स्वाभाविक और रोचक बनाता है।

कालिदास की कल्पना शक्ति और रचना की निपुणता से रसहीन कथानक भी सजीव और रोचक बन जाता है। इसमें उनकी काव्य प्रतिभा का उत्कृष्ट योगदान है। कालिदास ने अपनी कृतियों की विषय-वस्तु को प्राचीन आख्यानों से लिया है। फिर अपने काव्य-कौशल और कल्पना शक्ति से उन्होंने इस प्रकार सजाया है कि वह अत्यन्त रमणीय कथावस्तु बन गयी है। कालिदास वैदर्भी शैली के श्रेष्ठ कवि माने गये हैं- "वैदर्भी रतिसन्दर्भे कालिदासो विशिष्यते।" प्रसाद गुण का होना वैदर्भी शैली की प्रमुख विशेषता है। कालिदास को प्रसाद-गुण युक्त उनकी शैली ने ही उन्हें

कविश्रेष्ठ बनाया। कालिदास की शैली व्यंजना शक्ति का बहुत योगदान है। सूक्ष्म संकेत करने के लिए किसी भाव के चित्रण में उनके द्वारा व्यंजना शक्ति का आश्रय लिया जाता है।

रस-योजना

कालिदास के काव्यों में श्रृंगार रस के वर्णन की प्रधानता है किन्तु अन्य रसों को भी यथास्थान महत्व प्राप्त है। श्रृंगार वर्णन में कालिदास अतुलनीय हैं। श्रृंगार रस के दोनों पक्षों- संभोग श्रृंगार और विप्रलम्भ श्रृंगार - का सुन्दर परिपाक उनकी रचनाओं में हुआ है। संभोग का सुन्दर वर्णन कुमारसंभव के अष्टम सर्ग में विवाहोपरान्त नव समागम के प्रसंग में दृष्टव्य है-

व्याहृता प्रतिवचो न सन्दधे गन्तुमैच्छदवलाम्बितांशुका।

सेवते स्म शयनं पराङ्मुखी सा तथापि रतये पिनाकिनः।।

इस प्रकार शिव के द्वारा कुछ कहने पर भी पार्वती कोई उत्तर नहीं दे रही हैं, आँचल खीचने पर भी हट जाना चाहती थी और सोने के समय दूसरी ओर मुख करके सोती थी। फिर भी मुग्धा की इन सरस चेष्टाओं के मर्मी शंकर जी पार्वती जी की इस प्रतिकूलता से और भी प्रसन्न होते जा रहे हैं।

पूर्व मेघ में 'स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु' द्वारा कालिदास ने स्त्रीमन का स्पर्श किया है कि स्त्रियाँ प्रारंभ में अपने प्रेम को कहकर प्रकट नहीं करती बल्कि अपने हाव भाव के माध्यम से प्रकट करती हैं। संभोग श्रृंगार का एक अन्य मनोहारी वर्णन मेघदूत में मिलता है जब कवि कागता है कि गंभीरा नदी रूपी नायिका चंचल चितवन के साथ जब मेघ रूपी नायक से मिलती है तो भला वह उसे कैसे छोड़ सकता है- 'ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः'।

कालिदास के काव्यों में रसों का सम्यक सामंजस्य को उन्हें रससिद्ध कवीश्वर बनाता है। उन्होंने श्रृंगार रस के अतिरिक्त करुण, शान्त, वीर, हास्य आदि सभी रसों का समुचित समावेश किया है। कुमारसंभव का रति-विलाप और रघुवंश का अज-विलाप करुण रस की धारा वेगवान बनाते हैं। कुमारसंभव पंचम सर्ग में हास्य रस की सृष्टि होती है जब वटुवेषधारी शिव पार्वती से कहते हैं कि अब तक तो तुम श्रेष्ठ हाथी पर चढ़ती रही हो किन्तु विवाह के पश्चात् तुम्हें शिव के साथ बूढ़े बैल पर बैठे हुए देखकर साधुजन हंसने लगेंगे। रघुवंश में रघु और राम के युद्ध के वर्णन में वीर रस का परिपाक हुआ है।

छन्द-योजना

किसी भी काव्य के उत्कर्ष में छन्द योजना का महत्वपूर्ण स्थान है। कालिदास ने प्रसंगविशेष के लिए कुछ निश्चित छन्दों का प्रयोग किया है, जो इंगित करता है कि वे विशेष भावों और रसों के लिए कुछ विशेष छन्दों का प्रयोग ही उपयुक्त समझते हैं, जैसे वियोग या वर्षा का वर्णन करने में मन्दाक्रान्ता, वीरता के प्रकरण में वंशस्थ, कार्य की सफलता पर बसन्ततिलका आदि का प्रयोग किया है।

कालिदास को उपजाति और अनुष्टुप जैसे छोटे-छोटे छन्द अधिक प्रिय थे। किन्तु बड़े छन्द भी उनको प्रिय हैं। सम्पूर्ण मेघदूत मन्दाक्रान्ता छन्द में लिखा है। ध्यातव्य है कि कालिदास ने अपने ग्रन्थों में आवश्यकतानुसार छन्दों का प्रयोग किया है। ऋतुसंहार में बसन्तलिका, उपजाति और मालिनी छन्दों का प्रयोग किया है, रघुवंश और कुमारसंभव में उपजाति, अनुष्टुप, वंशस्थ और मालिनी छन्दों का प्रयोग हुआ है।

अलंकार

अलंङ्क्रियतेऽनेनेति अलंकार अर्थात् जिससे किसी वस्तु की शोभा बढ़ायी जाय वह अलंकार है। काव्यों में अलंकार का महत्वपूर्ण स्थान है। महाकवि कालिदास ने अपने काव्यों में शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों का प्रयोग किया है किन्तु अधिक आग्रह अर्थालंकारों पर ही प्रतीत होता है। महाकवि ने अलंकारों के प्रयोग में बड़ी सजगता का परिचय दिया है। शब्दालंकार के मोह से स्वयं को दूर रखा है। क्योंकि शब्दालंकार मूलभावना के तत्व प्रायः गौण कर देते हैं। कालिदास ने उसका प्रयोग बहुत ही स्वाभाविक ढंग से किया है। अलंकारों के प्रयोग में उनकी सूक्ष्म मर्मज्ञता से पाठक परिचित होते हैं। अत्यधिक तथा अनावश्यक अलंकारों के भार से दबी हुई स्त्री के समान मन्द गति से चलने वाली कविता कालिदास की नहीं हो सकती है बल्कि वह तो पूर्ण चन्द्र की भांति निर्मल नीले आकाश में अपनी सादगी से सहृदयों को आकृष्ट करती है। उनके अनुप्रास अनायास बनते प्रतीत होते हैं, बलात् प्रयोग तो उनकी रचनाओं में निषिद्ध है। रघुवंश के नवम् सर्ग में दशरथ की राजव्यवस्था, बसन्त व ग्रीष्म ऋतु के वर्णन तथा आखेट-वर्णन में यमक का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। कालिदास श्लेष के प्रयोग में भी विशेष दिखते हैं जो सरलता से बोधगम्य हैं।

सादृश्य विधान प्रस्तुत करने वाले अलंकारों में उपमा सर्वप्रमुख है जिसका कालिदास ने प्रचुरता से किया है और "दीपशिखा कालिदास" बन गए। सादृश्यमूलक अलंकारों में उपमा के अतिरिक्त अर्थान्तरन्यास का प्रयोग भी बहुत किया है। दीपशिखा कालिदास का यह श्लोक विश्वव्यापी बन गया-

संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।

नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।। (रघुवंश)

सादृश्यमूलक अलंकारों में उपमा और अर्थान्तरन्यास के अतिरिक्त उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, रूपक, व्यतिरेक, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों की छटा भी उनके काव्य को अलंकृत करती है। इन अलंकारों के अतिरिक्त कालिदास ने स्वाभावोक्ति, निदर्शना, व्यतिरेक, रूपक आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग करके अपने काव्य कौशल का परिचय दिया है।

प्रकृति-चित्रण

कालिदास का प्रकृति का मनोरम वर्णन उनको प्रकृति का सूक्ष्म द्रष्टा बनाता है। उनके ग्रन्थों में वन और पुष्पों का अद्भुत वर्णन प्राप्त होता है। उनकी प्रकृति सजीव प्रतीत होती है और नित्य मनुष्यों में नवशक्ति का संचार करती है। उनके काव्यों में अन्तः एवं बाह्य प्रकृति में सुन्दर तादात्म्य स्थापित पाया जाता है। प्रकृति को आलम्बन, उद्दीपन, मानवीकरण एवं अलंकारिक आदि रूपों में चित्रित किया गया है। उनकी प्रथम रचना ऋतुसंहार तो प्रकृति को समर्पित की गयी थी। इसमें प्रकृति हो आलम्बन रूप में कम और उद्दीपन रूप में अधिक प्रयुक्त किया गया है। इस काव्य में जहां एक ओर ग्रीष्म की प्रचण्डता का वर्णन है वहीं दूसरी ओर बसन्त की मोहकता का भी वर्णन है। रघुवंश महाकाव्य में वशिष्ठ के आश्रम का अत्यंत स्वाभाविक चित्रण दिखता है जब ऋषियों की पर्णशालाओं के द्वार को मृग राह रोककर बैठे हुए हैं और उन ऋषियों के द्वारा इन पर सन्तान के समान स्नेह होने के कारण नीवार के कुछ अंश इन्हें भी दिये जाते हैं- 'अकीर्णमृषिपत्नीनाममुटजद्वाररोधिभिः। अपत्यैरिव नीवारभागधेयोचिमर्त्तैगैः'।।

कुमारसंभव महाकाव्य का प्रारम्भ पर्वतराज हिमालय के गुणगान से हुआ है जो प्रकृति को ही समर्पित है-

अस्त्युत्तरस्यां दिषि देवतात्मा, हिमालयो नाम नागाधिराजः। पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य, स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।

कालिदास ने प्रकृति के कई रूपों को चित्रित किया है। किन्तु उनको प्रकृति का कोमल रूप ही प्रियतर है। मेघदूत में आम्रकूट पर्वत के वर्णन में इसके शिखर पर काला मेघ है और आस पास पके फलों से युक्त आम्र के वृक्ष होने के कारण यह पृथ्वी के स्तन के समान शोभा को प्राप्त हो रहा है- इस प्रकार की मनोरम कल्पना कालिदास के काव्य कौशल को दर्शाती है।

कालिदास ने अपने काव्यों में भाषा, शैली, रस, छन्द, अलंकार, प्रकृति वर्णन आदि को प्रसंग के अनुसार अपने काव्य कौशल का प्रयोग किया है।

कालिदास की कृतियों से प्रतीत होता है कि वे वैभव और सुख-सुविधाओं से परिपूर्ण युग का प्रतिनिधित्व करते हैं। संगीत तथा नृत्य और चित्र-कला से उन्हें विशेष प्रेम था। तत्कालीन ज्ञान-विज्ञान, विधि और दर्शन-तंत्र तथा संस्कारों का उन्हें विशेष ज्ञान था। उन्होंने भारत की व्यापक यात्राएं कीं और वे हिमालय से कन्याकुमारी तक देश की भौगोलिक स्थिति से पूर्णतः परिचित थे। कालिदास की रचनाएँ उपदेशात्मक शैली की नहीं हैं वरन् उनमें विनम्रता से निवेदन का भाव प्राप्त होता है। भारत की पौराणिक कथाओं और दर्शन को आधार बनाकर रचनाएं की और उनकी रचनाओं में भारतीय जीवन और दर्शन के विविध रूप और मूल तत्व निरूपित हैं। अभिज्ञानशाकुंतलम् नाटक कुछ उन भारतीय साहित्यिक कृतियों में से है जिनका सबसे पहले यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद हुआ था। यह मेघदूतम् कालिदास की एक आँय सर्वश्रेष्ठ रचना है जिसमें कवि की कल्पनाशक्ति और अभिव्यंजनाशक्ति अपने सर्वोत्कृष्ट स्तर पर है और प्रकृति के मानवीकरण का अद्भुत वर्णन इस खंडकाव्य में दिखता है। कालिदास की अमर कृतियाँ हैं – ऋतुसंहार, रघुवंश, कुमारसम्भव ,मेघदूत, अभिज्ञान- शाकुन्तल, मालविकाग्निमित्र और

विक्रमोर्वशीय हैं। कालिदास का अनुराग दो स्थानों की ओर विशेष रूप से लक्षित होता है-एक उज्जयिनी और दूसरे हिमालय की उपत्यका।